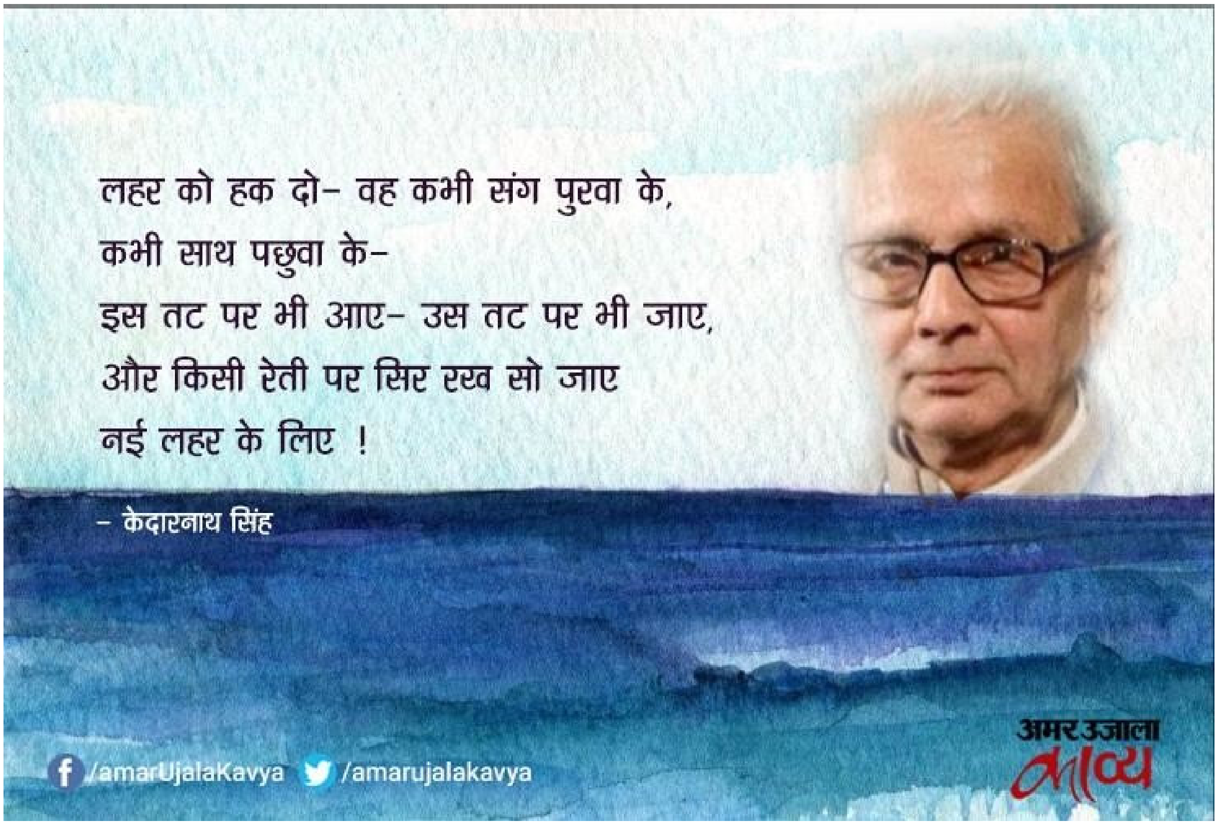

संदर्भ https://www.bbc.com/hindi/india-43466601

नागार्जुन के बाद आधुनिक हिंदी के सबसे लोकप्रिय कवि थे केदारनाथ

मंगलेश डबरालवरिष्ठ कवि-पत्रकार, बीबीसी हिंदी के लिए

- 20 मार्च 2018

पहले कुंवर नारायण, फिर चंद्रकांत देवताले और अब केदारनाथ सिंह. एक साल से भी कम समय में हमारे समय के तीन सबसे महत्वपूर्ण कवि एक के बाद एक करके दुनिया से विदा लेकर चले गए.

हिंदी कविता के लिए ये बेहद दुखद समय है. 70-80 साल को पार करने वाली पूरी पीढ़ी विदा लेकर चली गई है. हमारे सामने एक बड़ा सन्नाटा हो गया है, एक शून्य खिंच आया है.

अब नए लोगों को कविता लिखने के लिए प्रेरित करने वाले, उम्मीद जगाने वाले शायद बहुत कम बड़े कवि बचे हैं.

केदारनाथ सिंह हिंदी के ऐसे अनोखे कवि थे जिन्होंने लोक संवेदना, ग्रामीण संवेदना और कस्बाई संवेदना, इन तीनों के लिए आधुनिक हिंदी काव्य भाषा के बीच में जगह बनाई और उसे विकसित किया.

इमेज कॉपीरइटMANGLESH DABRAL/BBC

केदार जी की यात्रा नवगीत से शुरू हुई थी. उनके नवगीतों का संग्रह 'अभी, बिलकुल अभी' हिंदी में बहुत चर्चित रहा. आज भी, जब हिंदी में नवगीतों की परंपरा लगभग खत्म हो गई है, उनके नवगीत आज भी लोगों को आकर्षित करते हैं.
'गिरने लगे नीम के पत्ते, बढ़ने लगी उदासी मन की'...इस तरह के जो उनके गीत हैं वो सहज ही लोगों के दिलों में बस गए थे.

इसके बाद वो कस्बाई संवेदना के बीच आए. बनारस में लंबे समय तक रहने के बाद फिर वे पढ़ाने के लिए अपने कस्बे पढ़रौना चले गए. लंबे समय तक शिक्षक रहे. वहां से वे जवाहर लाल नेहरू विश्वविधालय आए. यहां आने के बाद से उनकी कविताओं में एक आधुनिक रूप उभरना शुरू किया.

वे तीसरा सप्तक के महत्वपूर्ण कवियों में थे. ये तब प्रकाशित हुई थी, जब वे बनारस में थे. वहां से होते हुए, नई कविता से होते हुए वे प्रगतिशील संवेदना तक कवि के तौर पर उनकी यात्रा रोमांचक और सार्थक रही.

इमेज कॉपीरइटMANGLESH DABRAL/BBC

दस्तावेज़ की तरह है उनकी संग्रह

आधुनिक कविताओं का उनका पहला संग्रह है 'ज़मीन पक रही है'. यह अत्यंत महत्वपूर्ण संग्रह है. इस संग्रह से उनके प्रगतिशील होने की तरफ बढ़ने के संकेत मिल सकता है. उसके बाद उनके कई काव्य संग्रह आए, सब महत्वपूर्ण हैं.

उनका अंतिम काव्य संग्रह है 'सृष्टि पर पहरा'. कई अर्थों में यह महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है. एक तो पर्यावरण संबंधी चिंताएं हैं, दूसरे उनकी राजनीतिक वक्तव्यों वाली कविताएं भी हैं. इन सबके साथ इसमें संसार से जाने की उदासी भी है, अपने ही भविष्य को लेकर जो चिंताएं होती हैं वो भी इस संग्रह की उनकी कविताओं में दिखती है.

उनकी लिखी कविताओं का असर कितना होता है, इसे बनारस से समझा जा सकता था. बनारस कविता, बनारस को ऐसे परिपेक्ष्य में देखती है जैसे पहले कभी नहीं देखा गया. बनारस पर काफी कुछ लिखा गया, उसके सांस्कृतिक महत्व को शायद सब लोग जानते हैं लेकिन बनारस को कभी इस तरह नहीं देखा गया जिस तरह से केदार जी ने देखा. बहुत गंभीर होते हुए भी बेहद लोकप्रिय कविता है.

- हिंदी को दूसरों पर थोपना ग़लतः केदारनाथ सिंह

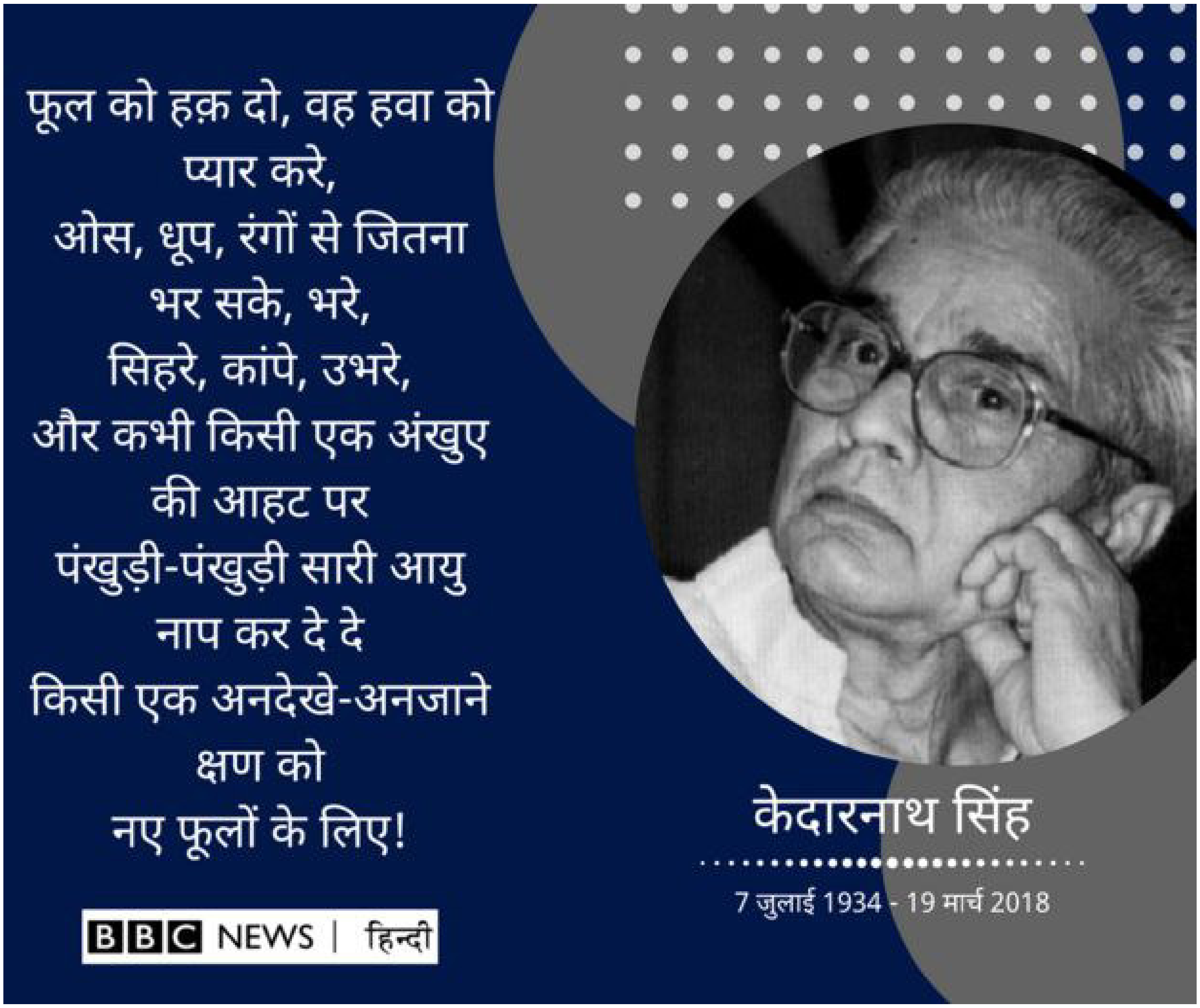

कविता को बनाया लोकप्रिय

ऐसी एक और कविता है नूर मियां. ये कविता देश के विभाजन पर, बढ़ती हुई सांप्रदायिकता और मुसलमानों की मुश्किलों पर महत्वपूर्ण टिप्पणी की. हालांकि उनका स्वर बहुत मुखर नहीं था, वे बेहद कम शब्दों में सहज अंदाज़ में कविता लिखा करते थे. लेकिन बिना मुखर हुए वे अपने को व्यक्त करते रहे, ये स्वर उनमें हमेशा बना रहा. उन्होंने इसी स्वर में कई महत्वपूर्ण कविताएं लिखीं.

केदार जी हिंदी के उन चुनिंदा कवियों में शामिल हैं जिन्होंने कविता को लोकप्रिय बनाया. उनकी कविता इस बात का उदाहरण है कि कैसे गंभीर होते हुए कविता को लोकप्रिय बनाया जा सकता है. उन्होंने गंभीर कविता और लोकप्रिय कविता के बीच के अंतर को पाटा.

वो खुद भी बेहद लोकप्रिय थे. मेरे ख्याल से आधुनिक हिंदी में बाबा नागार्जुन के बाद उनके जितना लोकप्रिय शायद ही कोई कवि रहा होगा.

उनके शिष्यों, जो बहुत हैं, के अलावा समाज में ऐसे ढेरों लोग हैं जो उनकी कविताओं को पढ़ते रहे, उनसे प्रेम करते रहे. गांव, कस्बे से लेकर वो जहां जहां गए- रहे, वहां के लोग उनको अपना.

- [हिन्दी की सबसे ख़ौफ़नाक क्रिया है जाना केदारनाथ का]

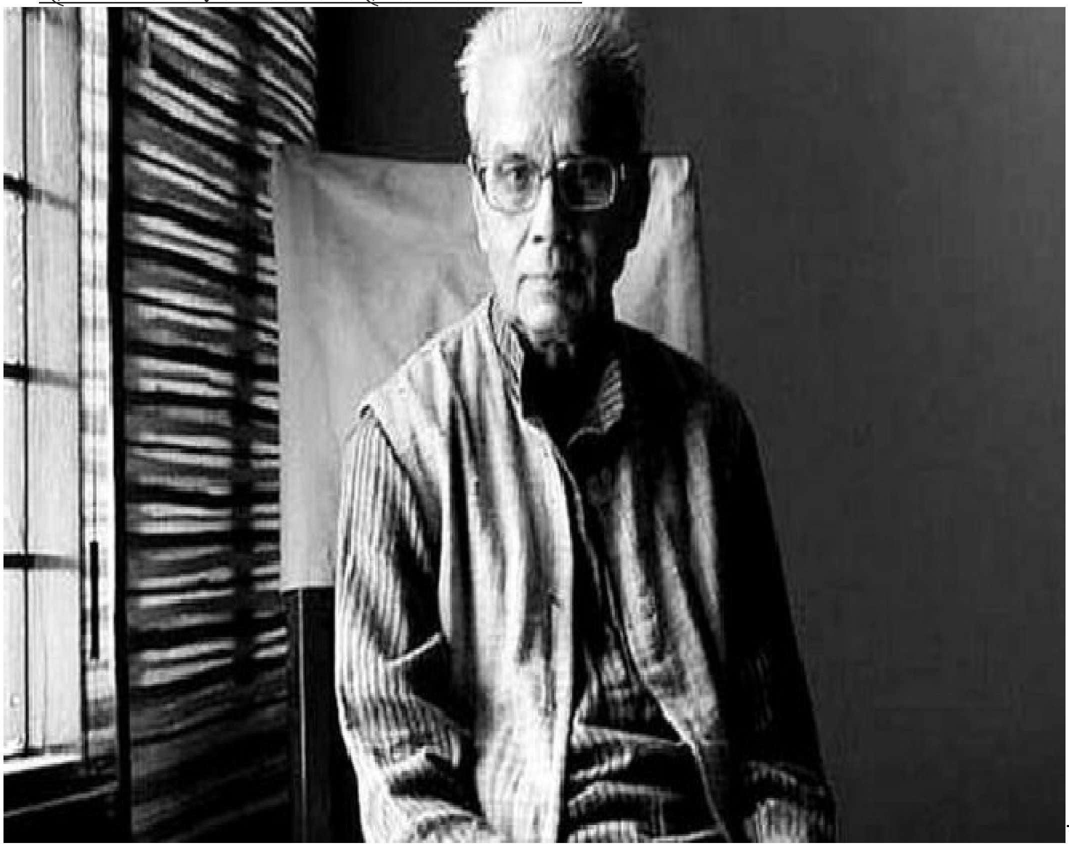
इमेज कॉपीरइटFACEBOOK/VANI PRAKASHAN

उनके पेश करने का तरीका

केदार जी की सबसे बड़ी खासियत यही थी कि वे अनुभव को बेहद आत्मीय और आत्मीय ढंग से पेश करते रहे. उनमें कोई ओढ़ी विद्धता या विद्धता का कोई विकार नहीं था. वे हमेशा देहाती, गांव के आदमी बने रहे. उनका मूल स्वभाव भी यही था.

इसलिए उनकी कविताओं में गांव से कस्बे में आने का, कस्बे से दिल्ली जैसे बड़े शहर में आने का तनाव भी दिखता है. ऐसे तनाव का इस्तेमाल जिस तरह से वो कविताओं में इस्तेमाल करते हैं वो भी अनोखा है.
दिल्ली के बारे में उनकी एक कविता देखिए- *'बारिश शुरू हो रही है, बिजली गिरने का डर है, वे क्यों भागे जाते हैं जिनके घर हैं.'*

राजनीतिक टिप्पणियां भी उनके कविता में बखूबी मिलती हैं. उनकी लिखी एक गजल है-
'एक शख्स वहां जेल में है, सबकी ओर से
हंसना भी यहां जुर्म है क्या, पूछ लीजिए
अब गिर गई जंजीर, बजाएं तो क्या भला

क्या देंगे कोई साज नया, पूछ लीजिए'

ऐसी टिप्पणियां मिलती हैं, लेकिन लोगों को उम्मीद थी कि वो ज्यादा मुखर होकर राजनीतिक हालात पर टिप्पणी करेंगे, लेकिन हर कवि का अपना शिल्प होता है.

केदार जी की कविताओं में सौंदर्य के दर्शन होते हैं. जीवन में सुंदरता और कोमलता कहां कहां मिल सकती है, उनकी कविताएं हमें वह टटोलने में मदद करती है, उन जगहों पर वे हमें ले जाते हैं.

उनकी एक कविता है सृष्टि पर पहरा. वे लिखते हैं-
'कितना भव्य था
एक सूखते हुए वृक्ष की फुनगी पर
तीन चार पत्तों का हिलना
उस विकट सुखाड़ में
सृष्टि पर पहरा दे रहे थे
तीन चार पत्ते'

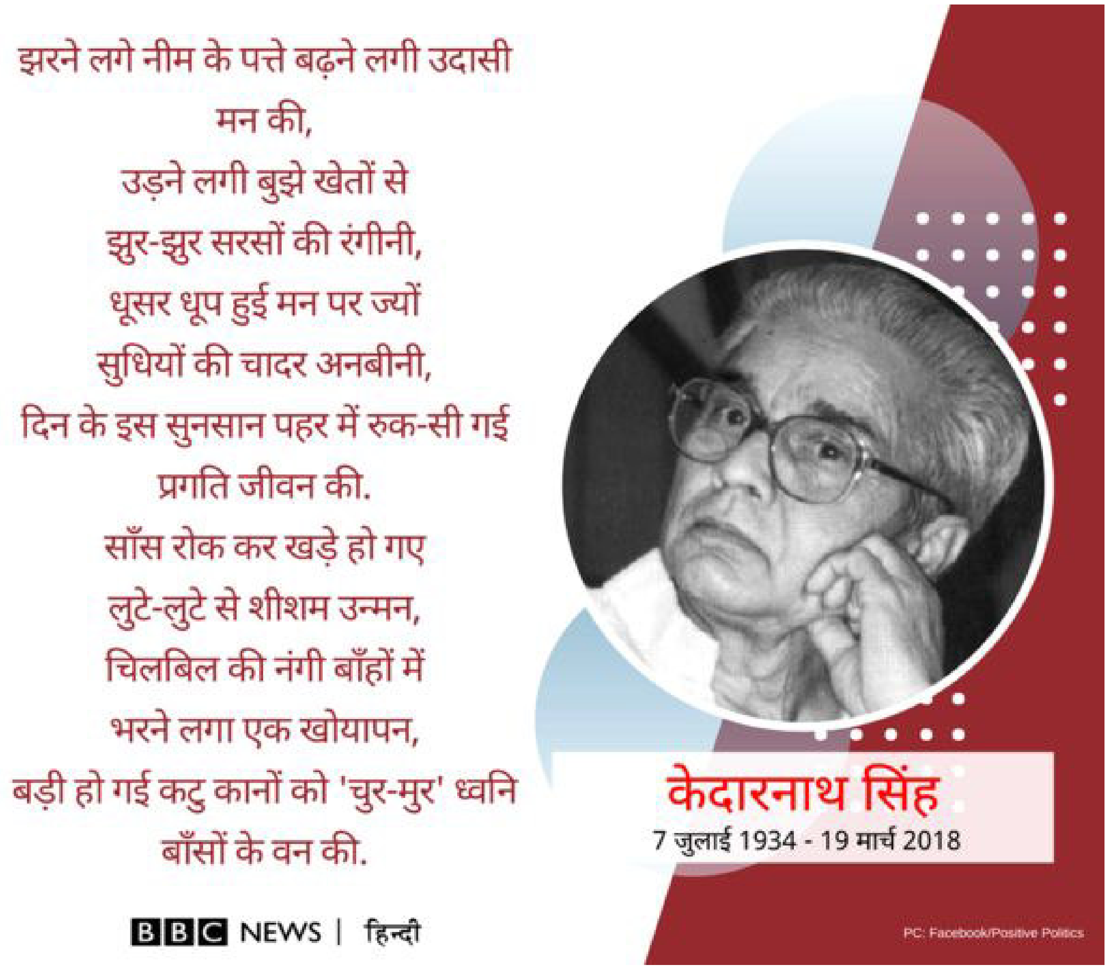

इस कविता के माध्यम से उन्हें उम्मीद है कि रेगिस्तान में तीन चार पत्ते भी हैं तो सृष्टि का निर्माण कर सकते हैं.

उनकी एक सशक्त एवं मार्मिक कविता है-
'मैं जा रही हूं- उसने कहा.
जाओ- मैंने उत्तर दिया
ये जानते हुए कि जाना
हिंदी की सबसे खौफ़नाक क्रिया है'

इस छोटी से कविता में देख लीजिए जीवन और वियोग की पूरी दुनिया छुपी है. एक और कविता में वे लिखते हैं-
'उसका हाथ
अपने हाथ में लेते हुए मैंने सोचा
दुनिया को
हाथ की तरह गर्म और सुंदर होना चाहिए'

अब देखिए हाथ की उष्मा से दुनिया की तुलना. एक कवि यही तो करता है छोटी छोटी चीज़ों के माध्यम से अपना बड़ा वक्तव्य सामने रखता है.

केदार जी जितने सहज कवि थे, उतने ही सरल और मार्मिक मनुष्य भी थे. आत्मीयता से लोगों से मिलते थे. वे कविता के बारे में बात नहीं करते थे.

अपने बारे में और अपनी कविताओं के बारे में तो बिलकुल नहीं, ये उनको पसंद नहीं था.

कई जगहों पर मैंने देखा कि कविता पढ़ने से पहले अगर उनके परिचय में कुछ ज्यादा बोला जाता तो वो टोक देते, रहने दीजिए बहुत हो गया.लेकिन पढ़रौना के अपने दोस्तों नूर मियां, कैलाशपति निषाद जैसे दोस्तों को बारे में खूब बात करते थे. साल में दो-तीन पर अपने गांव ज़रूर जाते रहे. अपने लोगों के बीच बैठते थे, वही उनका संसार बना रहा.

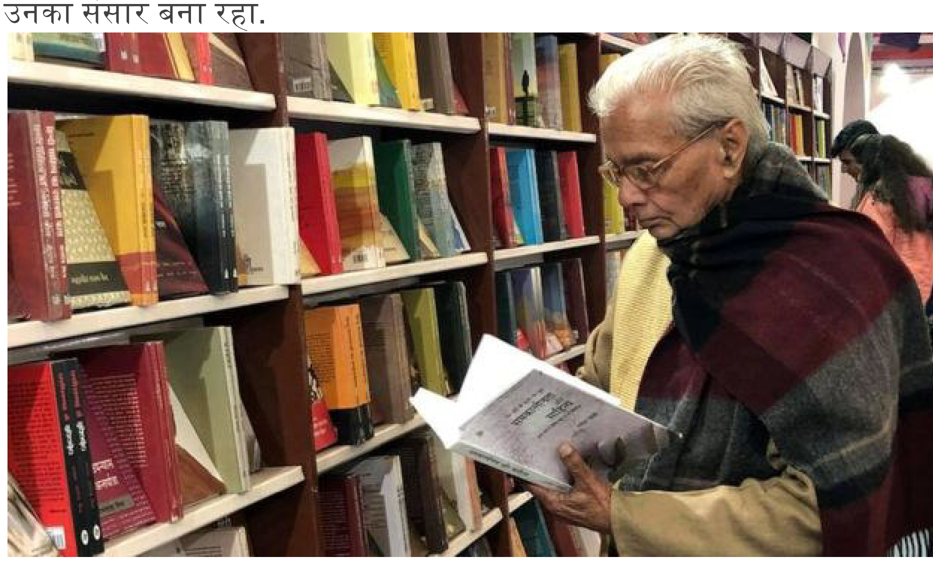

इमेज कॉपीराइटFACEBOOK/RAJKAMAL PRAKASHAN SAMUH

उनके जीवन में पत्नी के निधन का सन्नाटा भी दिखता है, अक्सर उनके बारे में बातें करते थे. उन्होंने अपने अकेलेपन को पत्नी को समर्पित करते हुए भी कविताएं लिखी हैं. हिंदी में पत्नी पर लिखी बहुत कविताएं हैं और उनमें केदार जी की कविता बहुत अच्छी है.

मां और पिता पर भी उन्होंने कविताएं लिखी हैं. पिता पर लिखी कविता की पंक्ति दिलचस्प- 'जिस मुंह ने मुझे चुमा था, अंत में उस मुंह को मैंने जला दिया.'

दरअसल उनके सरोकार भी बहुत थे. भाषा को लेकर भी. भोजपुरी में उन्होंने तमाम कविताएं लिखी हैं. भिखारी ठाकुर बहुत मार्मिक कविता लिखी है उन्होंने, संभवत भिखारी ठाकुर पर ये पहली कविता है.

वैसे संयोग ये है कि उनका अंतिम संग्रह है सृष्टि पर पहरा, उस संग्रह की अंतिम कविता है- 'जाऊंगा कहां.' ऐसा लगता है कि ये उनका अंतिम वक्तव्य है-
'जाऊंगा कहां, रहूंगा यहीं
किसी किवाड़ पर
हाथ के निशान की तरह
पड़ा रहूंगा
किसी पुराने ताखे
या संदूक की गंध में
छिपा रहूंगा मैं
दबा रहूंगा किसी रजिस्टर में
अपने स्थायी पते के
अक्षरों के नीचे
या बन सका
तो ऊंची ढलानों पर
नमक ढोते खच्चरों की
घंटी बन जाऊंगा
या फिर मांझी के पुल की
कोई कील
जाऊंगा कहां
देखना
रहेगा सब जस का तस
सिर्फ मेरी दिनचर्या बदल जाएगी
सांझ को जब लौटेंगे पक्षी
लौट आऊंगा मैं भी
सुबह जब उड़ेंगे
उड़ जाऊंगा उनके संग...'

तो केदार जी भी उड़ गए लेकिन वे कहां कहां रहेंगे, यह उन्होंने पहले ही बता दिया है.

डॉ. केदारनाथ सिंह की रचना-प्रक्रिया // डॉ. मधुर नज्मी : प्राची – जनवरी 2018

समकालीन काव्य-परिदृश्य के प्रमुख हस्ताक्षर डॉ. केदारनाथ सिंह अपने मूल संवेदनात्मक भाव में एक श्रेष्ठ गीतकार की हैसियत रखते हैं. कविता में उनकी यह 'हैसियत' उनकी गीतात्मक तात्त्विकता के चलते हैं. यही 'गीतात्मक तात्त्विकता' डॉ. केदारनाथ सिंह को एक बड़ा कवि बनाती है. कोई भी काव्य-विधा 'गीतात्मक तात्त्विकता' को नकारकर, नजरअंदाज करके बड़ी कविता नहीं हो सकती. समूचे साहित्यिक परिदृश्य को दृष्टि में रखकर, यह बात बैलेंस, अदब से कही जा सकती है. डॉ. केदारनाथ सिंह की कविता के प्रतिनिधि समालोचक डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव का यह मानना, **"केदारनाथ सिंह शायद हिन्दी काव्य-परिदृश्य में अकेले ऐसे कवि हैं जो एक ही साथ गांव के भी कवि हैं और शहर के भी. अनुभव के ये दोनों छोर कई बार उनकी कविता में एक ही साथ और एक ही समय दिखाई पड़ते हैं. शायद भारतीय अनुभव की यह अपनी एक विशेष बनावट है, जिसे नकार कर सच्ची भारतीय कविता नहीं लिखी जा सकती."**

डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने डॉ. केदारनाथ सिंह की कविता की तात्त्विकता को कहां तक पहचाना है, यह एक अलहदा सवाल हो सकता है किंतु जहां-जहां डॉ. केदारनाथ सिंह का ग्राम्य-संवेदना, लोक-संवेदना, गीतात्मक संवेदना से, अपनी कविता में जुड़ाव संभव हुआ है, वहां-वहां डॉ. केदारनाथ सिंह अपनी कविता में भरपूर बुलन्द नजर आते हैं. जहां-जहां उनकी कविता में ग्राम्य परिवेश का दामन छूटा है, वहां-वहां उसी अनुपात में कविता पस्त नजर आती है. डॉ. केदारनाथ सिंह बुलन्दी और मस्ती के बेजोड़ कवि हैं. उनकी कविता में समुद्र सी ऊंचाई और हिमालय-सी गहराई का एहसास कविता के मर्मी, सरोकारी एक साथ करते हैं. इसे तरह भी कहा जा सकता है कि ग्राम्य-बोधी संचेतना-संवेदना से हट-कट कर डॉ. केदारनाथ सिंह एक बिखरे और बिफरे कवि लगते हैं. गीत और गीतात्मक संवेदना, ग्राम और ग्रामबोधी संवेदना के परे कविता का कोई अस्तित्व भी होता है, यह एक जिन्दा सवाल है जो बेमानी नहीं है.

स्व. केदारनाथ अग्रवाल और डॉ. केदारनाथ सिंह की कविता अपनी लोकोन्मुखता की बदौलत ही पहचान पा सकी है. केदारनाथ सिंह ने अपनी गीतात्मक तात्त्विकता के नाते ही एक विशिष्ट पहचान बना ली है. यह 'पहचान' सिर्फ लोकरंगता और लोक संवेदना से होकर गुजरती है. प्रगतिशील शिविरबद्धता ने केदारनाथ सिंह के कवि को आहत किया है. हां, इतना जरूर हुआ है कि प्रगतिशील शिविर-खेमा ने केदारनाथ सिंह को कंधे पर बैठाकर खूब उछाला है. जिसके वे सही मानी में हकदार हैं. उर्दू की प्रगतिशील कविता के प्रमुख नाम अली सरदार जाफरी, गुलाम रब्बानी ताँबा, कैफी आजमी, साहिर लुधियानवी, जां-निसार 'अख्तर' हैं. इनमें से सिर्फ साहिर लुधियानवी, जां-निसार अख्तर ही दो ऐसे शायर हैं जिनकी शाइरी में बाह्य और अन्तः सौन्दर्य है. चाहे अली सरदार जाफरी हों, गुलाम रब्बानी ताबां हों, कैफी आजमी हों, इनकी गजलें और नज्में अन्तः सौन्दर्य के सवाल पर एक चुप्पी भर हैं.

यदि प्रगतिशील शिविर के सांचे और खांचे में रखकर विचार किया जाय तो डॉ. केदारनाथ सिंह, केदारनाथ अग्रवाल ही दो ऐसे प्रगतिशील अति हैं जिनके वहां बाह्य सौन्दर्य के साथ-साथ अन्तः सौन्दर्य की पर्याप्त समन्विति है. नागार्जुन, त्रिलोचन शास्त्री, मलखान सिंह सिसोदिया आदि की कविताएं अपने बाह्य कलेवर के नाते दूर तक साहित्य के सरोकारी को नहीं बांध पाती हैं. राजनीतिक कूटनीति इनकी कविताओं में आकर सिर्फ नारेबाजी तक ही महदूद रह जाती हैं. अपनी कथन-भंगिमा के चलते प्रभावित तो ये तीनों ही कवि करते हैं किंतु इनकी कविताएं पाठक को पकड़कर छोड़ देती हैं. किंतु डॉ. केदारनाथ सिंह और केदारनाथ अग्रवाल की रचना-प्रक्रिया के साथ पूर्णरूपेण ऐसा नहीं है. प्रगतिशील शिविरबद्धता के नाते केदारनाथ सिंह को लोकप्रियता तो जरूर मिल गयी किन्तु प्रगतिशीलता की बलिवेदी पर एक 'श्रेष्ठ गीतकार' का उत्सर्ग हो गया. संभवतः अपनी कामयाबी के रहस्य को डॉ. केदारनाथ सिंह खुद भी नहीं समझ पाये हैं.

गीतकार सम्बोधन भी उन्हें रुचता है. गीत के खिलाफ खड्ग-हस्त होते उन्हें कई-कई सेमिनारों-गोष्ठियों में देखा-महसूस किया गया है. गीत के संदर्भ में उनकी बयानबाजी कम सांघातिक नहीं है. जिस 'गीत की जमीन' ने उन्हें क्या कुछ नहीं दिया, क्या कुछ नहीं दे रही है, उसी की मुखालिफत कविता के सरोकारियों को दर्द देती है. शिविरबद्धता-खेमेबाजी के चलते डॉ. केदारनाथ सिंह जैसा भी गीत के लिए कहें किन्तु सच्चाई यह है कि गीत सिर्फ गीत, गांव सिर्फ गांव ने उन्हें युगीन पहचान दी है. डॉ. नामवर सिंह, डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, मैनेजर पाण्डेय, डॉ. पुरुषोत्तम अग्रवाल, डॉ. काशीनाथ सिंह जैसे अनेकशः आलोचक केदारनाथ सिंह की कविता पर तो खुलकर बोलते हैं. जब नये रचनाकारों की काव्य-शिल्पना का जिक्र आता है तो मारक खामोशी अख्तियार कर लेते हैं.

हमारे कुछ नये रचनाकारों ने केदारनाथ सिंह से 'सरपासिंग' रचा है. आखिर ये लोग नये रचनाकारों के अवदान को नकार कर, जिक्र न कर चाहते क्या हैं? किसी भी रचनाकार की रचना समग्रता में श्रेष्ठ होती ही नहीं. केदारनाथ सिंह ने अपनी अधिसंख्य कविताओं में कचरा ही परोसा है, किन्तु ये सदाशयी समीक्षक समग्रता में केदारनाथ सिंह को प्रशस्ति के पानी से नहला रहे हैं. ईश्वर करे इनकी आंख का मोतियाबिंद कटे और कलम से पाजामें में डोरी डालने की प्रथा का पराभव हो और सच्ची कविता चाहे जहां हो मंजरे-आम पर आये.

प्रगतिशील और जनवादी समीक्षा में भाई-भतीजावाद, समधीवाद का प्रकोप ज्यादा लगता है. इस प्रक्रिया में हमारे उत्साही सच्चे रचनाकारों की रचना-प्रक्रिया पर नश्तर-सा चल जाता है. समीक्षा की आज मानक कसौटियां सोना कम, तांबा ज्यादा परोस रही हैं.

हमारे प्रगतिशील-जनधर्मी समीक्षकों को समूचे कविता परिदृश्य को ध्यान में रखकर समीक्षाएं करनी चाहिये. जिन नये समकालीन रचनाकारों ने कविता में नया शैल्पिक मोड़ दिया है उनके श्रम का भी मूल्यांकन होना चाहिये. यदि नये रचनाकारों की कविता के प्रति हमारे समीक्षकों का रवैया स्वीकार्य नहीं है तो उन्हें उनका मुखापेक्षी भी नहीं होना चाहिये. साधुक रचनाकारों को खुद राह बना लेने की हिम्मत जुटानी होगी.

'केदारनाथ सिंह प्रतिनिधि कवितायें' संज्ञक काव्यकृति में संपादक डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव अपनी संपादकीय में कहते हैं, "केदार कविता यात्रा के हर प्रथान बिंदु पर कोई कठिन चट्टान तोड़ते हैं जो सुन्दर हो जाती है, कोई और कठिन चट्टान तोड़ते हैं जो और सुन्दर होती चली जाती है. ऊर्जा और कला का यह सार्थक संगठन केदार की एक खासियत है जिसे पाठक अलग से पहचान सकते हैं." दोस्त के नाते डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव और साथी के नाते डॉ. नामवर सिंह डॉ. केदारनाथ सिंह के 'चट्टान तोड़ने' जैसे दर्द को तो महसूस करते हैं, किन्तु जिन्होंने कविता का पहाड़ काटा है, उनके श्रम का क्या इन्होंने कभी मूल्यांकन किया. मूल्यांकन तो छोड़िये उनका नाम लेना तक उन्होंने अपराध माना है. लोक-संवेदना, गांव-गंवई की मर्मस्पर्शी अनुभूतियों ने केदारनाथ सिंह को बड़ा कवि बनाया है, शहरी परिवेश ने उन्हें जोड़-गांठ करने वाले एक समीक्षक का रूप दिया है.

डॉ. केदारनाथ सिंह का समीक्षक एक विश्वविद्यालीय अध्यापक मात्र है. कविता सर्जना है और समीक्षा उप-सर्जना- कविता न हो तो समीक्षा सिर्फ चिमटे से अंगारा छूने की प्रक्रिया मात्र है. साहित्य के सरोकारियों को डॉ. केदारनाथ सिंह का दर्द इन शब्दों में सृजनाकृति पाता है, **"इतने बड़े शहर में/रहता है एक कवि/वह रहता है जैसे कुएं में रहती है चुप्पी/जैसे चुप्पी में रहते हैं शब्द/जैसे शब्द में रहते हैं डैनों की फड़फड़ाहट/वह रहता है इस इतने बड़े शहर में/और कभी कुछ नहीं कहता."**

महानगरीय कवि की व्यथा का यह एक नमूना है जिसे केदारनाथ सिंह आत्मिक स्तर पर अनुभूत करते हैं. शहर की दुनिया अपनी विराटता में बौनी होती है. 'शब्द' शीर्षक कविता में डॉ. केदारनाथ सिंह कहते हैं, **"ठण्ड से नहीं मरते शब्द/वे मर जाते हैं साहस की कमी से/कई बार मौसम की नमी से/मर जाते हैं शब्द.'' "मुझे एक बार खूब लाल पक्षी जैसा शब्द/मिल गया था गांव के कछार में/मैं उसे ले आया घर/पर ज्यों ही पहुंचा वह चौखट के पास/उसने मुझे कए बार एक अजब-सी कातर दृष्टि से देखा/और तोड़ दिया दम/."** (गांव के कछार का मोह)गांव की संवेदना जब तक केदारनाथ सिंह में रहेगी वे बड़े कवि बने रहें.

‘मांझी का पुल’, ‘रास्ता’, ‘मैंने गंगा को देखा’, ‘नदी’, ‘बिना नाम की नदी’, ‘नीम’, ‘बोझे’, ‘दाने’, ‘आवाज’, ‘पानी में घिरे हुए लोग’, ‘बुनाई का गीत’, ‘जब वर्षा शुरू होती है’ आदि कविताओं में लोक-संवेदना, गीतात्मक तात्त्विकता, शरीरी कम आध्यात्मिक रूमानी तात्त्विकता अपने पूरे फार्म में रंगिमा बुनती है. ‘शब्द’ की गुणवत्ता पर विचार करते हुए डॉ. केदारनाथ सिंह ने कहा है, **"शब्द मेरे लिए पदार्थ हैं. शब्दों के इसी पदार्थमयता को मैं कविता में खोजता हूं. शब्द जो कहता है वह एक ठोस चीज है और वह ठोस चीज किस तरह से शब्द के ज्यादा से ज्यादा करीब लाई जा सके कविता में यही मेरी कोशिश रही है.....आज की पूरी कविता के लिए शब्द सिर्फ शब्दकोश का ‘शब्द’ नहीं वो भाषा वाचक नहीं, स्वयं पदार्थ है. इसी पदार्थमयता को पकड़ने की कोशिश मेरी कवितायें हैं."**

अपनी कविता में जिस पदार्थमयता का जिक्र डॉ. केदारनाथ सिंह करते हैं, वह उनकी गीतात्मकता और रूमानी लहजा है. जिस रूमान की ‘गीतात्मकता’ हमारे प्रगतिशील समीक्षक वैचारिक स्तर पर खारिज करते हैं, वही डॉ. केदारनाथ सिंह की कविता की मूल जमीन है. लट्ठमार भाषा कविता की भाषा हो ही नहीं सकती. अपनी सरल, तरल और मर्मस्पर्शी भाषा की बदौलत डॉ. केदारनाथ सिंह की कवि सत्ता है. एक मधुरिम शब्द अपनी सत्ता में गीतिम रसवत्ता लिए होता है. एक रसगर शब्द एक पूरा गीत होता है. ‘पदार्थमयता’ शब्द का कैनवस नितान्त छोटा है. दरअसल कविता के भाव जो एक कवि की संकल्पना में उगते हैं वे नितान्त लघु रूप में होते हैं. कवि उन्हें खींचतान कर नाहक लम्बा करता है. कविता लम्बी होते ही अपनी संप्रेषणीयता में चुक जाती है.

अपनी दुरूहता, गद्यात्मकता, अतिवादिता के कारण अज्ञेय के जीवन काल ही में ‘नयी कविता’ अपना दम तोड़ती नजर आ रही थी. लम्बी कविता को आक्टोपसी विचारधारा ने प्रेत की तरह कब्जा कर लिया था किन्तु ग्राम-संवेदना, लोक-संवेदना और गीतात्मक आभा से मंडित-समन्वित रचनाकारों ने समकालीन हिन्दी कविता के रूप में ‘नयी कविता’ को पुनर्जीवित किया. इन रचनाकारों की रचनाओं में बकौल डॉ. वेद प्रकाश ‘अमिताभ’ प्रकृति राग का बाहुल्य है. डॉ. रघुवीर सहाय मानते हैं, **"किसी भी तरह की कविता में संगीत होता है. आधुनिक कविता में भी संगीत है. वे लोग जो दावा करते हैं कि आधुनिक कविता में संगीत नहीं है, न संगीत जानते हैं न कविता. बिना संगीत के कविता हो ही नहीं सकती. संगीत उसका एक अनिवार्य अंग है."** जिस सांगीतिक आधार का जिक्र रघुवीर सहाय कविता के लिए करते हैं, वह गीत की कोख में जन्मा है. गीत से परे संगीत की कोई स्थिति नहीं होती.

गीत-संगीत की शक्ति को स्वीकारते तो सभी हैं, किन्तु सेमिनारों, साहित्यिक संगोष्ठियों और दूरदर्शन के सदाशयी अवसरों पर ‘गीत-गजल’ नाम आते ही खड्ग-हस्त हो जाते हैं. डॉ. केदारनाथ सिंह के वक्तव्यों के अनेक उदाहरण हैं. चाहे जिन वैदेशिक मानदण्डों को मीटर मानकर डॉ. केदारनाथ सिंह की कविता-धर्मिता को रेखांकित-रूपांकित किया जाय, हमारे प्रगतिशील समीक्षक चाहे जो जो हथियार कविता के लिए अख्तियार करें, किन्तु गीति-तत्व और लोकोन्मुखता ही केदारनाथ सिंह की कविता का, कामयाबी का राज है. ‘महानगर में कवि’ शीर्षक कविता का उदाहरण पहले आया है. अब डॉ. केदारनाथ सिंह की एक और कविता का उदाहरण बतौर नमूना प्रस्तुत है-

"दिल्ली में रहता हूं और दिल्ली में भी/अपने तरीके से गांव बसा लेता हूं/यह मुश्किल काम है/जो मुझे जिन्दा रहने के लिए/करना पड़ता है. गांव में यकीनन ग्रामवासी हूं/गांव के अनुभव दिल्ली ने मेरे भीतर नये सिरे से जगाये हैं/मुमकिन है दिल्ली में न होता तो कविता में इस तरह गांव भी न होता..... तो यह वास्तविकता है कि हमारे जीवन की जड़ें अधिकतर गांव में हैं."

‘नीम’ और ‘नदी’ शीर्षक दोनों ही कविताओं का परिवेश कविता में बोलता-बतियाता लगता है, **"खेत जग पड़े थे/पत्तों से फूट रही थी/चैत के शुरू की हल्की-हल्की लाली/सोचा मौसम बढ़िया है/चलो तोड़ लायें नीम के दो-चार हरे-हरे छरके."**

"अगर धीरे चलो/वह तुम्हें छू लेगी/दौड़ो तो छूट जायेगी नदी/अगर ले लो साथ/वह चलती चली जायेगी कहीं भी."

अपनी कविता के कलेवर में केदारनाथ सिंह कालजयी कवि होने का मर्तबा रखते हैं.

Dr. Virender Bhardwaj
Dr. Tarun